स एतमाग्नेयमष्टाकपालं निरवपत्। मनसे चरुम्। अनुमत्यै चरुम्। ततो वै तस्य सत्यं मनोऽभवत्। अनु स्वर्गं लोकमविन्दत्। सत्यꣳ ह्वा अस्य मनो भवति। अनु स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेन हविषा यजते। य उचैनदेवं वेद। सोऽत्र जुहोति। अग्नये स्वाहा मनसे स्वाहा। अनुमत्यै स्वाहा प्रजापतये स्वाहा स्वर्गाय लोकाय स्वाहाग्नये स्विष्टकृते स्वाहेति" ॥ ५ ॥ इति ॥

(६) अथ पञ्चमीमिष्टिं विधत्ते। "तं चरणमब्रवीत्। प्रजापते चरणेन वै श्राम्यसि। अहमु वै चरणमस्मि। मां नु यजस्व। अथ ते सत्यं चरणं भविष्यति। अनु स्वर्गं लोकं वेत्स्यसीति। स एतमाग्नेयमष्टाकपालं निरवपत्। चरणाय चरुम्। अनुमत्यै चरुम्। ततो वै अस्य सत्यं चरणमभवत्। अनु स्वर्गं लोकमविन्दत्। सत्यꣳ ह्वा अस्य चरणं भवति। अनु स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेन हविषा यजते। य उ चैनदेवं वेद। सोऽत्र जुहोति। अग्नये स्वाहा चरणाय स्वाहा। अनुमत्यै स्वाहा प्रजापतये स्वाहा। स्वर्गाय लोकाय स्वाहाग्नये स्विष्टकृते स्वाहेति" ॥ ६ ॥ इति ॥

(७) प्रत्येकमिष्टीर्विधाय तत्सङ्घातरूपं कर्म विधत्ते। "ता वा एताः पञ्च स्वर्गस्य लोकस्य द्वारः। अपाद्या अनुवित्तयो नाम। तपः प्रथमाꣳ रचति। श्रद्धा द्वितीयाम्। सत्यं तृतीयाम्। मनश्चतुर्थीम्। चरणं पञ्चमीम्। अनु ह वै स्वर्गं लोकं विन्दति। कामचारोऽस्य स्वर्गे लोके भवति। य एता-